'महाप्रयाण' एकांकी संग्रह में राष्ट्रीय चेतना

साक्षी,

शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय नाट्य परंपरा, विशेष रूप से एकांकी विधा, सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय सरोकारों की सशक्त अभिव्यक्ति रही है। आधुनिक हिंदी एकांकी लेखन में जहाँ प्रयोगशीलता, मानवीय संवेदना और सामाजिक यथार्थ प्रमुख विषय बनकर उभरे हैं, वहीं हरीश अरोड़ा जैसे साहित्यकारों ने इसे एक नए धरातल पर पहुँचाया है। उनके एकांकियों में राष्ट्रीय चेतना न केवल एक वैचारिक तत्व के रूप में प्रकट होती है, बल्कि वह समकालीन भारतीय मानसिकता, अस्मिता और इतिहास–बोध का भी संवेदनशील प्रतिनिधित्व करती है।

राष्ट्रीय चेतना का तात्पर्य मात्र देशभक्ति की भावना से नहीं है, बल्कि यह उस गहन आत्मबोध और उत्तरदायित्व की चेतना है जो व्यक्ति को अपने राष्ट्र की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिस्थिति के प्रति सजग बनाती है। यह चेतना उत्पीड़न, शोषण, विघटन और विदेशी सांस्कृतिक प्रभावों के विरुद्ध अपने देश की आत्मा की रक्षा करने की प्रेरणा देती है।

राष्ट्रीय चेतना को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि श्राष्ट्रीयश तथा चेतनाश इन दोनों अवधारणाओं का अर्थ स्पष्ट रूप से जाने क्योंकि इन्हीं की समन्विति से उस भावना का उदय होता है,जो व्यक्ति को राष्ट्रहित में समर्पित होने की प्रेरणा देती है। राष्ट्रीय शब्द उस भावना का घोतक है जो किसी व्यक्ति को राष्ट्र की एकता, अस्मिता, अखंडता और सांस्कृतिक चेतना से जोड़ती है चेतना वह अंतरूप्रेरणा है जो व्यक्ति के विचार, भावनाओं और कर्मों को दिशा देती है। जब श्राष्ट्रीयश्भावना राष्ट्र की गरिमा से जुड़ती है और 'चेतना' जागरूक आत्मबोध का रूप लेती है तभी राष्ट्रीय चेतना का वास्तविक रूप प्रकट होता है ।राष्ट्रीय चेतना के विविध आयाम है देशभक्ति, बलिदान की भावना, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध और सांस्कृतिक गर्व आदि।

स्पष्ट है कि राष्ट्रीय चेतना का अभिप्राय उस जीवित ऊर्जा से है जो किसी राष्ट्र को केवल भौगोलिक सीमाओं से नहीं, बल्कि एक साझा इतिहास, भाषा, संस्कृति, संघर्ष और भविष्य की आकांक्षाओं से जोड़ती है। यह चेतना स्वाधीनता संग्राम के समय जितनी आवश्यक थी, उतनी ही समकालीन संदर्भों मेंकृराजनीतिक भ्रष्टाचार, सांस्कृतिक विस्थापन, मूल्य विघटन आदि के विरुद्ध भी आवश्यक बनी हुई है।

हरीश अरोड़ा के एकांकी–नाटक समकालीन भारत के सामाजिक संकटों को सामने लाते हुए, एक व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण की स्थापना करते हैं। उनके एकांकी पात्र इतिहास से टकराते हैं, समाज के प्रश्नों से जूझते हैं, और अपने भीतर एक ऐसी वैचारिक दृष्टि का विकास करते हैं जो उन्हें केवल एक व्यक्तिगत नायक नहीं बल्कि राष्ट्रीय आत्मा का संवाहक बनाती है।

हरीश अरोड़ा समकालीन हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकारों में अग्रगण्य हैं। कविता, कहानी, एकाँकी, आलोचना आदि अनेक विधाओं में लिखने वाले हरीश अरोड़ा की रचनाओं में केवल कलात्मक अभिव्यक्ति ही नहीं है वरन इतिहास, कल्पना और युगबोध का अद्भुत समन्वय हैं। उन्होंने अपनी साहित्यिक साधना में भारत के गौरवशाली अतीत, संस्कृति तथा राष्ट्रीयता को इस तरह चित्रित किया है कि

पाठकों को न केवल ऐतिहासिक दृष्टिकोण प्राप्त होता है, अपितु वर्तमान और भविष्य के लिए एक प्रेरणादायी चेतना भी विकसित होती है।

हरीश अरोड़ा का सम्पूर्ण व्यक्तित्व राष्ट्र को समर्पित रहा है इसलिए उनकी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना का स्वर स्वाभाविक रूप से मुखरित होता है। उनका एकाँकी संग्रह 'महाप्रयाण' राष्ट्रीय चेतना की भाव भूमि पर ही आधारित है। ऐतिहासिक और पौराणिक एकांकियों से युक्त इस संग्रह में रचनाकार ने चार एकांकियों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न प्रतिमानों को आधार बनाया है जिसमें त्याग, समर्पण और बलिदान का भाव निहित है। चारों एकांकियों महाप्रयाण, अर्द्धसत्य, आत्मोसर्ग तथा त्यागपत्र में राष्ट्र के प्रति समर्पण त्याग और बलिदान की चेतना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है जो पाठकों के हृदय में राष्ट्रीय भावना की लौ प्रज्वलित कर देता है।

उनका ऐतिहासिक एकांकी 'महाप्रयाण' इसी भावभूमि पर आधारित है, जिसमें देशप्रेम, त्याग, बलिदान और आत्मनिष्ठा की भावना ओतप्रोत है। यह एकांकी न केवल राष्ट्र की एकात्मता और गौरव का संदेश देती है, बल्कि पाठकों के हृदय में देशभक्ति की ज्वाला भी प्रज्वलित करती है।

'महाप्रयाण' एकांकी चाणक्य के अखंड भारत के स्वप्न को साकार करने के संकल्प की गाथा है। यह आधुनिक भारत की वर्तमान चेतना का वाहक भी है। इस एकांकी की पृष्ठभूमि गुप्तकालीन गौरव और चाणक्य के राष्ट्र–निर्माण संकल्प से जुड़ी है। चाणक्य द्वारा नंद वंश के अंत की रणनीति और अखंड भारत के स्वप्न को यहाँ आधुनिक विचारशील लेखक 'अनुराग' के माध्यम से पुनः प्रस्तुत किया गया है। अनुराग, जो एक ऐतिहासिक नाटक 'महाप्रयाण' का रचयिता है, स्वयं अपने ग्रंथ के अंत को लेकर मानसिक द्वंद्व में है। हिंसा–अहिंसा, नैतिकता–अराजकता, यथार्थ और कल्पना का द्वंद्व उसकी चेतना को आंदोलित करता है। इस एकांकी में यह प्रश्न उठता है कि राष्ट्र की रचना क्या केवल सत्ता परिवर्तन से होती है, या उसकी आत्मा और मूल्यों के संरक्षण से? 'राष्ट्र का हित जीवन जीने में नहीं, जीवन समझने में है।'1 यह संवाद महज कथन नहीं, बल्कि राष्ट्रीय चेतना का मूल स्वर है। लेखक ने गुप्तकाल की सांस्कृतिक उन्नति, दार्शनिक परंपरा, और राष्ट्रीय एकता के आदर्शों को वर्तमान की नैतिक क्षरण और राजनीतिक विभाजन के समांतर रखकर एक वैचारिक बहस प्रस्तुत की है।

इस एकांकी में महाकवि अनुराग के मन में अपने महाकाव्य के अंत को लेकर जो मंथन चल रहा होता है उसे शांत करने तथा समझाने का प्रयास अन्य पात्र करते हैं। इस एकांकी का प्रत्येक पात्र देशभक्ति से उत्प्रोत है सिद्धार्थक कहते हैं – "क्या अब भी आपको जीवन की सार्थकता से परिचित कराना होगा? आपका महाप्रयाण वास्तव में जीवन ही तो है जिसमें संपूर्ण राष्ट्र के प्राणों को स्थान मिलना है.... ।"[2]

यदि राष्ट्रीय एकता की बात की जाए, तो 'महाप्रयाण' एकांकी में आचार्य चाणक्य उनके सेवकों के कर्म और विचार स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि उनके लिए राष्ट्र की अखंडता और एकता ही सर्वोच्च ध्येय है। सेवक सिद्धार्थक कहते हैं – "आचार्य विष्णु गुप्त किसी विशेष योजना को क्रियान्वित कर रहे हैं वस्तुतः उनके कार्य कठिन नहीं होते किन्तु उनके नीतिपरक सिद्धांत के रूप चलने पर उनके कार्य कठिन प्रतीत होते हैं परंतु यह भी सत्य है कि उनका प्रत्येक कार्य राष्ट्र के अखंडता के प्रति विश्वसनीय होगा। मैं मां भारती के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह मुक्त होकर करते हैं उनकी स्पृहा देश हित से निहित होगी।"[3] इसी प्रकार चाणक्य का चरित्र वैयक्तिक महत्वाकांक्षा से परे जाकर समस्त भारतवर्ष को एक सूत्र में बाँधने का संकल्प लेकर चलता है। वे जानते हैं कि एक बिखरा हुआ राष्ट्र

आक्रांताओं का शिकार बन सकता है, उनके सेवक भी इसी उद्देश्य में अपने प्राणों की आहुति देने को तत्पर रहते हैं। उनके द्वारा किया गया संगठित प्रयास, त्याग और राष्ट्रधर्म के प्रति निष्ठा, 'महाप्रयाण' को राष्ट्रीय एकता का एक श्रेष्ठ उदाहरण बना देता है। यह एकांकी यह संदेश देती है कि जब समूह और नेतृत्व एक लक्ष्य के लिए समर्पित हो, तो राष्ट्र की अखंडता सुनिश्चित की जा सकती है।

यदि राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध की बात की जाए, तो हरीश अरोड़ा के एकांकियों का मूल उद्देश्य यही प्रतीत होता है कि पाठकों को राष्ट्रधर्म के प्रति जागरूक किया जाए। प्रत्येक एकांकी में पात्रों के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि जब राष्ट्र संकट में हो, तब कर्तव्य ही सर्वोच्च धर्म बन जाता है। 'महाप्रयाण' के अंत में महाकवि अनुराग अपने भीतर चल रहे द्वंद्व से उबरकर राष्ट्र के पुनर्निर्माण हेतु सृजन के माध्यम से योगदान देने का संकल्प लेते हैं, जो उनके कर्तव्यबोध का परिचायक है।

महाप्रयाण संग्रह में धर्म–संकट और आत्मग्लानि के बोध को अभिव्यक्ति करते 'अर्धसत्य' एकांकी में महाभारत के युद्धोपरांत दृश्य प्रस्तुत किए गए हैं जहाँ युयुत्सु की आत्मग्लानि और गांधारी की शोकाकुल वाणी के माध्यम से धर्म के जटिल प्रश्न उठते हैं। युयुत्सु धर्म के साथ था, पर उसे कुलघाती कहा गया। उसका संताप उसे आत्मदंड तक ले जाता है। 'घृणा मेरा फल है!' कृष्ण द्वारा दिया गया संवाद एक आशावादी दिशा देता है–

"मृत्यु केवल अर्धसत्य है अनुज प्रिय
यह जीवन संत्रास
व्यर्थ की कुंठा और निराशा
नहीं शोभता तुमको
जीवन में लय है
गति है
तुम करो उसी का गान।"[4]

यह जीवन–दर्शन भारतीय संस्कृति की वह शक्ति है जो युद्ध, संत्रास और अवसाद से भी पुनर्जागरण की राह निकालती है। राष्ट्रीय चेतना केवल युद्ध जीतने में नहीं, मानवता को पुनः जाग्रत करने में है।

एकांकी श्अर्धसत्यश में युद्ध की पृष्ठभूमि केवल बाह्य संघर्ष का चित्रण नहीं करती, अपितु वह धर्म, संस्कृति और राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा हेतु स्वयं के 'कल' और 'स्व' के त्याग की गहन भावना को उद्घाटित करती है। इस एकांकी में पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि जब राष्ट्र संकट में हो, तब एक सच्चा देशभक्त अपने व्यक्तिगत स्वार्थ, सुख–सुविधा और भविष्य की चिंता किए बिना, पूर्ण समर्पण की भावना से राष्ट्र की रक्षा हेतु तत्पर रहता है। इसी भावना को उद्घाटित करते हुए युयुत्सु अपनी माता गांधारी से संबोधित होकर कहते हैं –

माता मैं हूं सत्य समर्थक
शत्रु नहीं हूं
अपने कुल का
मैं तो केवल अपने कुल के
आदर्शों के सार–तत्त्व का रक्षक हूँ
नहीं शत्रु में....
खड़ा पांडव के दल में
सत्य जहाँ पर।[5]

'अर्धसत्य' में युद्धभूमि के माध्यम से यह दिखाया गया है कि राष्ट्र की रक्षा के लिए स्वयं के भविष्य और जीवन का बलिदान करना भी आवश्यक है।'अर्धसत्य' एकांकी में युयुत्सु का चरित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जो धर्म और राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध की भावना को सजीव करता है। युयुत्सु, जो कौरव कुल का सदस्य होते हुए भी

अन्याय, अधर्म और सत्ता के लोभ के विरुद्ध खड़ा होता है, वह यह सिद्ध करता है कि रक्त से बढ़कर धर्म होता है और कुल से बढ़कर राष्ट्र। युयुत्सु का यह साहसिक निर्णय दर्शाता है कि जब व्यक्ति निज स्वार्थ, मोह और संबंधों से ऊपर उठकर राष्ट्रहित और धर्म की रक्षा में स्वयं को समर्पित करता है, तभी उसका जीवन सार्थक बनता है।

इस संग्रह की तीसरा एकांकी 'आत्मोत्सर्ग' रामायण में घृणा की पात्र कैकयी के जीवन के पुनर्पाठ और राष्ट्र धर्म की नवीन सोच को लक्षित करता है। यह एकांकी रामायण की पारंपरिक कथा को एक नई दृष्टि से प्रस्तुत करता है। कैकयी को यहाँ एक षड्यंत्रकारी नहीं, बल्कि राष्ट्रहित के लिए व्यक्तिगत मातृत्व का त्याग करने वाली क्षत्राणी के रूप में दिखाया गया है। देवताओं की योजना और नारद की प्रेरणा से वह राम को वनवास दिलवाने को तैयार होती है, क्योंकि वही राक्षसी शक्तियों के नाश और धर्म की पुनर्स्थापना का माध्यम बनेंगे। "देवी! यह युद्ध राम और रावण का नहीं दृ यह सत्य और असत्य का युद्ध है।"[6] लेकिन कैकयी का यह स्वीकार "यदि देव और आर्य जातियों की राक्षसों से मुक्ति के लिए मुझे समाज और राज्य से बहिष्कृत भी होना पड़े तो कोई विकलता नहीं।"[7] स्त्री को राष्ट्र की रक्षक शक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है। राष्ट्र के लिए त्याग, वह भी एक स्त्री का, हरीश अरोड़ा के साहित्य में एक क्रांतिकारी हस्तक्षेप है।

आत्मोसर्ग में माता कैकेयी का अपने पुत्र राम को वनवास भेजना, उनके मातृत्व की नहीं, बल्कि राष्ट्रधर्म की सर्वोच्चता का प्रतीक बन जाता है। वे अपने कुल, धर्म और राष्ट्र की रक्षा के लिए व्यक्तिगत सुख, मान और माँ के रूप में अपनी ममता तक का त्याग कर देती हैं।

माता कैकेयी का चरित्र इस एकांकी में केवल एक माता का नहीं, बल्कि कर्तव्य के लिए समर्पित एक नारी योद्धा का प्रतीक बनकर उभरता है। वह जानती हैं कि भविष्य उन्हें कलंकित दृष्टि से देखेगा, इतिहास उनके नाम को तिरस्कार से पुकारेगा, फिर भी वे निज स्वार्थ, ममता और मोह का त्याग कर राष्ट्रधर्म को प्राथमिकता देती हैं। इस एकांकी में नारद और देवराज इंद्र के माध्यम से यह उद्घाटित होता है कि राष्ट्रहित की रक्षा हेतु कभीदृकभी ऐसा निर्णय लेना पड़ता है, जो व्यक्तिगत स्तर पर अत्यंत कठोर एवं पीड़ादायक होता है। वे माता कैकेयी को यह बोध कराते हैं कि सूर्यवंश की मर्यादा, राष्ट्र की अखंडता और धर्म की स्थापना के लिए उन्हें श्रीराम को वनवास भेजना होगा।

कैकेयी महर्षि नारद से संबोधित होकर कहती हैं– "हे महर्षि सूर्यवंशी ललनाएं अपने कुल की मर्यादा के लिए यदि अपना आत्मोत्सर्ग नहीं कर सकती तो धिक्कार है उनके जीवन पर। कैकयी की कीर्ति से कहीं अधिक सूर्यवंशियों की कुल कीर्ति का मान इस सृष्टि के लिए महत्वपूर्ण है। भरत के तिरस्कार का मुझे क्षोभ नहीं होगा –– न ही अयोध्या नगरी की समस्त प्रजा की है दृष्टि का ही।"[8] 'आत्मोसर्ग' में माता कैकेयी अपने व्यक्तिगत सुख और पुत्रमोह को त्यागकर राष्ट्रधर्म को प्राथमिकता देती हैं, जिससे उनका कर्तव्यबोध मातृत्व से भी ऊपर उठ जाता है।

इसी संग्रह के चौथे एकांकी 'त्यागपत्र' नीति बनाम सत्ता के संघर्ष की गाथा है। इस एकांकी में महाभारतकालीन महामंत्री विदुर के चरित्र के माध्यम से यह सशक्त रूप से प्रतिपादित किया गया है कि धर्म की रक्षा और राष्ट्र की मर्यादा के समक्ष कोई भी पद, प्रतिष्ठा या व्यक्तिगत हित तुच्छ है। जब राज्य व्यवस्था अन्याय और अधर्म की ओर अग्रसर होती है, तब विदुर धर्म और नैतिक मूल्यों के पक्ष में खड़े होकर, अपने महामंत्री जैसे उच्च पद का परित्याग करने में भी संकोच नहीं करते। उनका यह त्याग मात्र व्यक्तिगत निर्णय नहीं, बल्कि एक राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत आत्मबलिदान है।

महाभारतकालीन विदुर के चरित्र को केंद्र में रखकर रचित यह एकांकी, एक नैतिक राजनीतिज्ञ की दुविधा को प्रस्तुत करता है। जब दुर्योधन की अनीति और धृतराष्ट्र का मोह राष्ट्र को विनाश की ओर ले जाता है, तब विदुर एक विकल्प प्रस्तुत करते हैंकृ युद्ध का प्रतिरोध या उनका (महामंत्री का) त्यागपत्र। "महाराज! इस अमर्यादित जीवन जीने से कहीं अधिक उचित है, मैं अपने पद से त्यागपत्र दे दूँ।"9 यह कथन उस व्यक्ति की राष्ट्र के प्रति प्रतिबद्धता को दिखाता है जो सत्ता में होते हुए भी अनैतिक शासन का हिस्सा बनने को तैयार नहीं। यह आज के परिप्रेक्ष्य में भी सामयिक है जहाँ नैतिकता का स्थान अवसरवाद ने ले लिया है।

बलिदान की भावना एकांकी 'त्यागपत्र' का मूल स्वर है, जहाँ महामंत्री विदुर धर्म और राष्ट्रहित की रक्षा हेतु अपने पद का त्याग करते हैं। उनका यह निर्णय केवल एक राजकीय त्याग नहीं, बल्कि आत्मबलिदान का ऐसा अद्वितीय उदाहरण है, जो राष्ट्रीय चेतना की गहराई से जुड़ा हुआ है। इस एकांकी में महामंत्री विदुर अपने पद और प्रतिष्ठा को छोड़कर धर्म और राष्ट्रहित की रक्षा करते हैं, जो एक आदर्श कर्तव्यनिष्ठ नागरिक की पहचान है। इन दोनों पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्र के लिए बलिदान केवल शरीर का नहीं, बल्कि मन, मोह, और स्वार्थ का त्याग भी होता है। यह बलिदान राष्ट्रीय चेतना का शुद्धतम रूप है, जो व्यक्ति को सामान्य से असाधारण बना देता है।

अस्तु, 'महाप्रयाण' शीर्षक के अंतर्गत संकलित चारों एकांकी 'महाप्रयाण', 'त्यागपत्र', 'अर्धसत्य' और 'आत्मोसर्ग एक ही सूत्र में बंधे प्रतीत होती हैं और वह सूत्र है राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना। इस संग्रह का शीर्षक 'महाप्रयाण' न केवल प्रथम एकांकी का नाम है, बल्कि इसका प्रतीकात्मक अर्थ इन सभी नाटकों के भाव–संकेत में व्याप्त है। यह एक ऐसी वैचारिक यात्रा का प्रतीक है, जो आत्म–चिंतन, त्याग, धर्म और राष्ट्र के प्रति समर्पण से होकर गुज़रती है।

इन एकांकियों के पात्रकृमहाकवि अनुराग, विदुर, कैकेयी, कृष्ण, युयुत्सुकृअपने अपने समय, विचार और स्थिति में कर्तव्यबोध और आत्मबलिदान की मिसाल पेश करते हैं। यह स्पष्ट होता है कि जब राष्ट्र संकट में हो, तब व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन गौण हो जाता है, और राष्ट्रधर्म ही परम धर्म बनकर उभरता है।

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।'

इन सभी एकांकियों में यह स्पष्ट रूप से चित्रित होता है कि राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध ही वह आधार है, जो व्यक्ति को महानता की ओर अग्रसर करता है। यही भावना, यही चेतना, इन एकांकियों को साहित्यिक कृति से आगे बढ़ाकर राष्ट्रप्रेम का प्रेरणास्रोत बना देती है।

हरीश अरोड़ा का एकांकी–साहित्य केवल नाट्य संरचना नहीं, अपितु राष्ट्रभक्ति, त्याग, कर्तव्यबोध और सांस्कृतिक चेतना का सशक्त माध्यम है। उनके एकांकियों में इतिहास की पुनर्रचना कल्पना के साथ इस प्रकार गुंथी हुई है कि पाठक न केवल अतीत के गौरव से जुड़ता है, बल्कि राष्ट्रधर्म के प्रति जागरूक भी होता है।

भारतीय एकांकी परंपरा में जहाँ सामाजिक और मनोवैज्ञानिक विषयों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है, वहीं राष्ट्र की आत्मा, उसकी चेतना और सांस्कृतिक स्मृति को भी रूपायित किया गया है। हरीश अरोड़ा का एकांकी–संग्रह 'महाप्रयाण' इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कृति है। इसमें चार एकांकियों के माध्यम से लेखक ने इतिहास के प्रेरणा–स्रोतों को समकालीन संदर्भों से जोड़ते हुए राष्ट्रीय दायित्व बोध, नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा का आह्वान किया है। इनके एकांकियों में राष्ट्रीय चेतना एक जीवंत, सक्रिय और चेतन शक्ति के रूप में

उपस्थित है, जो नाटक को केवल मंचीय प्रदर्शन न बनाकर वैचारिक और नैतिक संवाद का माध्यम बनाती है। यह चेतना उनके नाट्य–साहित्य को विचारोत्तेजक बनाते हुए पाठक और दर्शक के भीतर आत्ममंथन की स्थिति उत्पन्न करती है।

'महाप्रयाण' संग्रह की चारों एकांकियाँ केवल ऐतिहासिक घटनाओं की पुनर्रचना नहीं हैं, बल्कि राष्ट्र की चेतना को आधुनिक संदर्भों में पुनः परिभाषित करने का प्रयास हैं। इनमें प्रस्तुत पात्र दृ चाणक्य, विदुर, युयुत्सु, कैकयी दृ हमारे संवेदनशील, विचारशील और आत्मसंघर्षशील राष्ट्र का प्रतीक हैं। हरीश अरोड़ा ने अपने एकांकी–साहित्य के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि इतिहास और पुराण केवल स्मृति नहीं, चेतना है और यह चेतना तभी जाग्रत रहती है जब साहित्य उसका संवाहक बनता है। यही एक सच्चे साहित्यकार का राष्ट्रीय दायित्व है। हरीश अरोड़ा यह दर्शाते हैं कि इतिहास के पात्रों और घटनाओं को केवल स्मरणीय नहीं, बल्कि आधुनिक जीवन के लिए प्रेरणास्रोत बनाना ही साहित्य का उद्देश्य है। उनके एकांकी पाठक को यह बोध कराते हैं किकृ राष्ट्र की सेवा ही सच्चा आत्मोद्धार है।

इस प्रकार, 'महाप्रयाण' शीर्षक अपने आप में सारगर्भित और पूर्णतः सार्थक है, जो इन सभी एकांकियों के भाव–केन्द्र और साहित्यिक उद्देश्य को समाहित करता है। यह संग्रह समकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना के पुनरुत्थान का एक सशक्त हस्ताक्षर है।

संदर्भ

1. अरोड़ा, हरीश; 'महाप्रयाण', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 33
2. अरोड़ा, हरीश; 'महाप्रयाण', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 32
3. अरोड़ा, हरीश; 'महाप्रयाण', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 30
4. अरोड़ा, हरीश; 'अर्धसत्य', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 52
5. अरोड़ा, हरीश; 'अर्धसत्य', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 41
6. अरोड़ा, हरीश; 'आत्मोत्सर्ग', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 69
7. अरोड़ा, हरीश; 'आत्मोत्सर्ग', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 74
8. अरोड़ा, हरीश; 'आत्मोत्सर्ग', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 74–75
9. अरोड़ा, हरीश; 'त्यागपत्र', महाप्रयाण, सूर्यप्रभा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 91